डी. एस. रेड्डी

बनाम

चांसेलर, ओस्मानिया विश्वविद्यालय एवं अन्य

9 दिसंबर, 1966

[के. सुब्बा राव, मुख्य न्यायमूर्ति, जे. सी. शाह, एस. एम. सिकरी, वी. रामास्वामी एवं सी. ए. वायडलिंगम, न्यायमूर्तिगण]

भारत का संविधान, अनुच्छेद 14- अपीलकर्ता को उस्मानिया विश्वविद्यालय अधिनियम, 1959 की धारा 12(1) के तहत 5 साल के लिए कुलपति नियुक्त किया गया - नई धारा 13(1) द्वारा 1966 के अधिनियम II में संशोधन करके कुलपतियों के पद का कार्यकाल कम किया गया 3 साल तक और नई धारा 12(2) द्वारा उन्हें हटाने के लिए प्रक्रिया प्रदान करना-1966 के दूसरे संशोधन अधिनियम XI में अपीलकर्ता के स्थान पर 90 दिनों के भीतर नए कुलपति की नियुक्ति का प्रावधान करने वाली नई धारा 13ए की शुरुआत करना-इस प्रकार एस का लाभ। 12(2) और धारा 13(1) ने अपीलकर्ता को अस्वीकार कर दिया - क्या मौजूदा कुलपति और भावी नियुक्तियों का वर्गीकरण उचित या भेदभावपूर्ण है

उस्मानिया विश्वविद्यालय (संशोधन) अधिनियम II 1966 के परिणामस्वरुप कुलपति और भविष्य का वर्गीकरण, उस्मानिया विश्वविद्यालय अधिनियम 1959 की धारा 12 (1) में केवल कुलाधिपति द्वारा कुलपति की नियुक्ति का प्रावधान करने के लिए संशोधन किया गया था धारा 12 (2) में एक प्रावधान पेश किया गिया था जिसके तहत उसे केवल किसी ऐसे व्यक्ति द्वारा जॉच के बाद दुर्व्यवहार या अक्षमता के आधार पर पारित कुलाधिपति के आदेश द्वारा पद से हटाया जा सकता था जो उच्च न्यायालय या सर्वोच्च न्यायालय के न्यायाधीश था या रहा था। न्यायालय और कुलपति को इस तरह के निष्कासन के खिलाफ अपना प्रतिनिधित्व करने का अवसर दिए जाने के बाद 1959 अधिनियम की धारा 13 (1) में भी संशोधन किया गया ताकि कुलपति के कार्यालय का कार्यकाल 5 से घटाकर 3 वर्ष किया जा सकेँ।

1959 अधिनियम को बाद में 1966 में उस्मानिया विश्वविद्यालय (दूसरा संशोधन) अधिनियम XI 1966 द्वारा फिर से संशोधित किया गया था। इस संशोधित अधिनियम की धारा 5 में एक नया संशोधन पेश किया गया था। 1959 के अधिनियम में 13 ए, जिसके

तहत यह प्रावधान किया गया था कि कुलपति का पद संभालने वाला व्यकित केवल उस पर रह सकता है जब तक कि नए कुलपति की नियुक्ति नहीं हो जाती और ऐसी नई नियुक्ति कार्यालय शुरु होने के 90 दिनों के भीतर की जानी चाहिए अधिनियम के लागू होने के बाद पुराने कुलपति का पद पर रहना बंद हो जाएगा।

अपीलकर्त्ता ने अन्य बातों के साथ-साथ यह दावा करते हुए एक रिट याचिका दायर की। दूसरे संशोधन अधिनियम के 5 में नई धाराएँ प्रस्तुत की गई धारा 13 (ए) उनके खिलाफ भेदभाव पूर्ण था इसलिए अधिनियम 14 का उल्लंधन था। उच्च न्यायालय ने याचिका खारिज कर दी।

उच्चतम न्यायालय में अपील में, उत्तरदाताओं की और से यह तर्क दिया गया कि चूँकि पहले संशोधन अधिनियम द्वारा कार्यालय की अवधि को धटाकर 3 वर्ष कर दिया गया था, इसलिए इस प्रावधान को प्रभावी करने और नई नियुक्तियों को साक्षा करने के लिए विधायिका अधिनियम के तहत बनाया जाएगा, अधिनियमित किया गया था 13 ए, जो आवश्यक रुप से, अपीलकर्त्ता, जैसे व्यक्ति पर लागू होता था जो उस समय पद पर था जब प्रावधान लागू हुए थे। इस तरह के प्रावधान चीजों की प्रकृति के अनुसार, भविष्य में नियुक्त होने वाले कुपतियों पर लागू नहीं हो सकते, अपीलकर्त्ता को असंशेषित धारा 12 (2) के तहत गठित एक समिति द्वारा प्रस्तुत पैनल से नामित किया गया था जबकि भावी कुपतियों की नियुक्ति कुलाधिपति द्वारा की जानी थी, इसके अलावा, अपीलकर्त्ता 7 वर्षो तक कुपति रहा था। इन परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए विधायिका ने अपीलकर्त्ता को अपने आप में एक वर्ग के रुप में मानने का फैसला किया था और उसे भविष्य में कुपति नियुक्त किए जाने वाले व्यक्तियों से अलग कर दिया था ऐसा वँगीकरण उचित था और दूसरे संशोधन अधिनियम द्वारा प्राप्त की जाने वाली वस्तु के साा इसका तर्कसंगत संबंध था सभी कुलपतियों के लिए 3 वर्ष के कार्यकाल में एकरुपता लाना कि अपीलकर्त्ता लाभ का हकदार नहीं था घारा 12 (2) का और विधायिका सक्षम थी अधिनियम करने में धारा 13 ए के तहत अपीलकर्त्ता दूसरे संशोधन अधिनियम की धारा 5 (1966 की XI) का प्रस्तीकरण धारा 13 A 1959 अधिनियम में भेदभावपूर्ण था और इसलिए अधिनियम के उल्लंधनकारी थे [282]

इस आधार पर कुलपति के एक वर्गीकरण दो श्रेणियों में अर्थात अपीलकर्त्ता के रुप में तत्कालिन मौजूदा कुलपति और भविष्य के कुलपतियों को दे श्रेणियों में वर्गीकृत किए जाए

यानी अपीलकर्त्ता को तत्कालिन मौजूदा कुलपति और भविष्य के रुप में इंगित किया जाए अधिनियम के तहत उचित ठहराया जा सकता प्रथम संशोधन अधिनियम द्वारा कुलपति के लिए तीन वर्ष कार्यकाल पहले ही तय कर दिया गया था। इसलिए दूसरे संशोधन अधिनियम द्वारा प्रस्तुत धारा 13 ए के तहत अपीलकर्त्ता की सेवा समाप्त करने के लिए अपनाए गए विभेदक सिंद्ांत और अकेले अपीलकर्त्ता के खिलाफ निर्देशित को दूसरे संशोधन अधिनियम द्वारा प्राप्त की जाने वाली वस्तु के साथ तर्कसंगत संबंध नहीं माना जा सकता है। बुद्न चौधरी बनाम विहार राज्य [231 बी-डी]

जबकि एक कुलपति धारा 12 के तहत प्रक्रिया की सेवाएँ जो एक कुलपति भी थे और समान पद पर थे, को अधिनियम बनाकर समाप्त करने की मॉग की गई थी अधिनियम की धारा 13 ए अधिनियम के अंतर्गत इस विभेदक व्यवहार को उचित ठहराने वाली कोई नीति नहीं थी। इस अंतर का भी कोई औचित्य नहीं था कि अपीलकर्त्ता को 90 दिनों के भीतर कार्यालय से बाहर कर दिया जाएगा, जबकि अधिनियम के तहत नियुक्त अन्य सभी कुलपति तीन साल तक पद पर बने रहेगे [231 ईजी]

सिविल अपीलय क्षेत्राधिकारः 1966 की सिविल अपील सं० 2313

1966 की रिट याचिका 853 में ऑध्र प्रदेश उच्च न्यायालय के 13 अक्टूबर 1966 के निर्णय और आदेश से विशेष अनुमति द्वारा अपील

एम०सी०सीतलवाड डी० नसायजू, अनवर उल्लाह पाशा, आर०वी०पिल्लई और एम०एम० काशीत्रिय, अपीलकर्त्ता की ओर से

निटेन डे, अतिरिक्त सॉलिसिटर जेनरल, पी राम रेड्डी एस० रामचन्द्र रेड्डी टी०बी० आर० ताताचारी, उत्तरदाताओं के लिए

न्यायालय का फैसला **वैद्यलिगम, न्यायमूर्ति** द्वारा सुनाया गया यह अपील इस न्यायालय द्वारा दी गई विशेष अनुमति द्वारा ऑध्र प्रदेश उच्च न्यायालय द्वारा रिट याचिका 1966 53, को 13 अक्टूबर, 1966 के आदेश के खिलाफ निर्देशित है अपीलकर्त्ता द्वारा संविधार के अनुच्छेद 226 के तहत दायर किया गया। अपीलकर्त्ता ने निम्नलिखित परिस्थितियों में उक्त रिट याचिका दायर की अपीलकर्त्ता उस्मानिया विश्वविद्यालय का कुलपति था, जिसे आंध्र प्रदेश के राज्यपाल द्वारा पारित आदेश दिनांक 30 अप्रैल 1964 द्वारा नियुक्त किया गया था, उस्मानिया विश्वविद्यालय के चांसलर के क्षमता के रुप में।

उक्त आदेश के तहत अपीलकर्त्ता की नियुक्ति, कुलपति के रुप में, इसमें कोई विवाद नहीं है, कार्यभार ग्रहण करने की तारीख से पॉच साल की अवधि के लिए थी और नियुक्ति स्वयं उपधारा 1, उस्मानिया विश्वविद्यालय की अधिनियम, 1959 के 12 ऑध्र प्रदेश अधिनियम सं० XI, इसमें फिर से कोई विवाद नहीं है कि अपीलकर्त्ता ने उक्त आदेश के अनुसार 30 अप्रैल 1964 को कुलपति के रुप में कार्यभार संभाला और इस तरह वह पॉच साल की पूरी अवधि के लिए पद पर बने रहने का हकदार बन गया, जो कि अप्रैल 1969 के अंत में समाप्त होगा।

उस्मानिया विश्वविद्यालय की स्थापना 19189 में हुई थी और विश्वविद्यालय का प्रशासन तब हैदराबाद राज्य के निजाम महामहिम के चार्टर 1947 में द्वारा प्रख्यापित शासित होता था 1 नबंबर 1956 की हैदाराबाद राज्य का अस्तित्व समाप्त हो गया उस राज्य तेलांगना क्षेत्र आध्र प्रदेश का हिस्सा बन गया 1959 में आध्र प्रदेश विद्यालय सभा ने उस्मानिया विश्वविद्यालय अधिनियम 1959 पारित किया, जिसका उल्लेख पहले किया गया था। वह अधिनियम स्वयं विश्वविद्यालय के संबंधित कानून को संशोधित और समेकित करनेवाला था। इस चरण में केवल यह नोअ करना आवश्यक है कि अधिनियम के धारा 12 (1) में यह प्रावधान किया गया था कि कुलपति की नियुथ्कत कुलाधिपति द्वारा उपधारओं के तहत गठित समिति द्वारा चयनित कम से कम तीन वयक्तियों के पैनल में से की जाएगी (2) लेकिन यदि कुाधिपति इस प्रकार चुने गए किसी भी व्यक्ति को मंजूरी नहीं देते है, तो वह समिति से एक नया पैनल मॉग सकते है। धारा 13 में फिर से कुलपति का कार्यकाल, वेतन और भत्ते आदि को प्रावधान किया गया है, उप-धारा (1) के अंतर्गत कुलपति के पद का कार्यकाल पॉच वर्ष के लिए निर्धारित किया गय था और इस आशय का एक अतिरिक्त प्रावधान भी था वह पुनर्नियुक्ति के लिए पात्र होगा।

उक्त अधिनियम के 51 द्वारा 1947 के उस्मानिया विश्वविद्यालय संबंधित चार्टर को निरस्त कर दिया गया, लेकिन फिर भी यह प्रावधान किया गया कि अधिनियम के प्रारंभ उल्लेखित परिस्थतियों पर कुलपति होगा और उक्त पद पर बना रहेगा।

इसमें फिर से कोइ्र विवाद नहीं हे कि अपीलकर्त्ता जो पहले से ही 1957 से उस्मानिया विश्वविद्यालय का कुलपति था, को 1959 में इस अधिनियम के तहत पॉच साल की अवधि के लिए फिर से कुलपति के रुप में नियुक्त किया गया था और इसी तरह उन्हें 30 अप्रैल 1964 को कुलपति के रुप में पॉच साहल के लिए नियुक्त किया गया था जैसा कि

पहले उल्लेख किया गया है। 1965 के मध्यम दौरान कुछ परिस्थतियों में कुलाधिपति द्वारा कुलपति को कार्यालय से हटाने का प्रावधान करके अधिनियम में कुछ संशोधन पेश करने की मॉग की गइ्र थी। कुलपति के पद का कार्यकाल उनकी नियुक्ति की तारीख 5 वर्ष से घटाकर 3 वर्ष करने का भी प्रस्ताव था, और प्रावधान किए जा रहे थे, सरकार को उनके द्वारा पालन की जाने वाली निति के मामलों से संबंधित विश्वविद्ालय को निर्देश में सक्षम बनाना।

अधिनियम में जिन संशोधनों की मॉग की गर्इ थी ऐसा प्रतीत होता है कि कई हलकों में इसकी काफी आलोचना हुई है, और हमले के तहत आदेश में उन्हें विस्तजुत रुप से निपटाया गय है। अपीलकर्त्ता के अनुसार वह उन लोगों में से एक थे जिन्होने इस आधार पर प्रस्तावित संशोधनों का बहुत सख्ती से विरोध किया था कि सरकार विश्वविद्यालय की स्वायत्तता में हस्तक्षेप करने की कोशिश कर रही थी। अपीलकर्त्ता के अनुसार, फिर से, उनके और अन्य लोगों के द्वारा की गई विभिन्न आलोचनओं पर इंटर यूर्निवसिटी बोर्ड केन्दीय शिक्षा मंत्री और अन्य लोगों द्वारा ध्यान दिया गया। अपीलकर्त्ता का यह भी मामला है कि आंध्र प्रदेश सरकार को यह महसूस हआ कि प्रस्तावित संशोधनों के खिलाफ जो आदोलन किया जा रहा थिा, उनके लिए वह जिम्मेदार था। लेकिन अततः आध्र प्रदेश विधानमंडल के उस्मानिया विश्वविद्यालय संशोधन (अधिनियम) 1966 (1966 का अधिनियम) पारित कर दिया जिसमें कुछ विशिष्ठताओं में उस्मानिया विश्वविद्यालय अधिनियम 1959 में संशोधन किया गया उक्त संशोधन इस आशय के हे कि कुलपति को कार्यालय से नहीं हटाया जाएगा सिवाय संशोधित अधिनियम की धारा 12 (2) के तहत संशोधित अधिनियम की धारा 13 के तहत कार्यालय का कार्यकाल भी 3 वर्ष निर्धारित किया गया था विश्वविद्यालय को निर्देश देने की सरकार की शक्ति से संबंधित एक अन्य प्रावधान धारा भी पेश किया गया था लेकिन अपीलकर्त्ता कुलपति पद पर बना रहा।

उस्मानिया विश्वविद्यालय अधिनियम उस्मानिया विश्वविद्यालय (दूसरा संशोधन) अधिनियम (1966 1966 का अधिनियम XI) द्वारा फिर से संशोधित किया गया था। इस संशोधन के तहत 13 ए अधिनियमित किया गया। संक्षेप में वह घारा इस आशय की थी कि 1996 के संशोधित अधिनियम के प्रारंभ होने के कुलपति का पद संभालने वाले व्यक्ति को केवल तब तक पद पर बने रहना था जब तक कि धारा 12 के उप-धारा (1) तहत एक नए कुलपति को नियुक्ति नहीं हो जाती 12, और यह भी प्रावधान किया गया कि ऐसा नियुक्ति एेसी शुरआत के 90 दिनों के भीतर की जाएगी। एक और प्रावधान था कि ऐसे नए कुलपति की नियुक्ति पर और उसके कार्यालय में करने पर ऐसी नियुक्ति से ठीक पहले कुपति का

पद धारण करने वाला व्यक्ति उस पद पर रहना बंद कर देगा। धारा 7 ए जो 1966 के अधिनियम 2 द्वारा लागू की गई थी, हटा दी गई, धारा 33-ए अधिनियमित किया गया, जिसमें विश्वविद्यालय की सीनेट, सिंडिकेट, अकाशमिक परिषद और वित्त समिति के पुनर्गठन के लिए विशेष प्रावधान किया गया।

अपीलकर्ता ने उच्च न्यायालय में रिट याचिका सं॰ 853/1966 दायर की जिसमें उस्मानिया विश्वविद्यालय (दूसरा संशोधन) अधिनियम के धारा 5 1966 को असंवैधानिक और अमान्य धोषित करने वाली रिट या आदेश जारी करने की प्रार्थना की गई उस रिट याचिका में उन्होने नई धारा 53 ए की वैधता का कइ आधारों पर चुनौती दी। संक्षेप में उनकी दलील थी कि उनकी 30 अप्रैल 1964 को कुलपति के रुप में नियुक्ति के बाद, उन्होने पूरे कार्यकाल के लिए उस पद बने रहने का एक निहित अधिकार प्राप्त कर लिया था और अवधि के दौरान, इस तरह के निहित अधिकार को छीना नहीं जा सकता था, किसी विधाशी अधिनियम द्वारा विधायिका के पास उक्त प्रावधान को अधिनियमित करने की कोई क्षमता नहीं थी धारा 13 ए को विश्वविद्यालय शिक्षा के संबंध में कानून नहीं माना जा सकता। अपीलकर्त्ता ने यह भी दलील दी थी कि यह प्रावधान वस्तुतः अपीलकर्त्ता को ऐसे निष्कासान के खिलाफ कारण बताने का कोइ अवसर दिए बिना उसके कार्यालय से हटाने जैसा है। अपीलकर्त्ता के अनुसार यह मानते हुए भी कि विधान सभा प्रशनगत प्रावधान को अधिनियमित करने के सक्षम थी, फिर भी धारा 13 ए असंवैधानिक और अमान्य हे, क्योंकि यिह संविधान के अधिनियम 14 का अपमान करता हैँ।

हम विचाराधीन प्रावधान की संवैधानिक वैधता के विरुद् लगाए गए हमले के विभिन्न अन्य आधारों पर विस्तार से चर्चा करना आवश्यक नहीं समझते है, जिन पर निस्संदेह उच्च न्यायालय द्वारा विचार किया गया है, क्योकि इस उद्देश्य के लिए इस अपील को प्रस्तुत करना, हमारी राय में अपीलकर्त्ता द्वारा धारा 13 ए की सवैधानिकता के संविधान के अधिनियम 14 ए पर आधारित के संबंध में उठाए गए हमले के आधारों को संदर्भित करने के लिए पर्याप्त है।

जहॉ तक इस पहलू का सवाल है, अपीलकर्त्ता के अनुसार 1959 के अधिनियम में संशोधन करना नई उप-धाराओं को शामिल करके 1959 के अधिनियम में संशोधन करता नई उप-धाराएँ 1 और 2 को धारा 12 में शामिल किया। कुलपति की नियुक्ति कुलाधिपति द्वारा की जाएगी, उप-धारा (2) कुलपति को कदाचार या अक्षमता के अधार पर पारित

कुलाधिपति के आदेश के अलावा उसके पद से नहीं हटाया जाएगा और इसमें यह भी प्रावधान किया गया है कि ऐसा आदेश किसी ऐसे व्यक्ति द्वारा उचित जॉच के बाद ही पारित किया जाएगा जो उच्च न्यायालय या उच्चतम न्यायालय का न्यायाधीश है था रहा है, जिसे कुलाधिपति द्वारा नियुक्त किया जा सकता है, और कुलपति को एक अवसर दिया जा सकता है निष्कासन के विरुद् अपना अभ्यावेदन देते हुए, इसलिए इन प्रावधानों के मद्देनजर कुलपति को कुलाधिपति द्वारा बिना किसी कारण, बिना किसी जॉच के निष्कासन के खिलाफ कारण बताने का अवसर दिए बिना नहीं हटाया जा सकता है। यह प्रावधान अपीलकर्त्ता पर लागू होता हे जो 1966 और 1966 के अधिनियम XI 1966 के अधिनियम XI के पारित होने की तिथि को पद पर था बावजूद इसके 1966 के अधिनियम XI में कूल अधिनियम में धारा 13 ए को शामिल किया गया। उस धारा के तहत कुलाधिपति को न केवल शक्ति प्रदान की गई है, बल्कि अपीलकर्त्ता जो कुलपति था, को बिना किसी कारण या औचित्य या यहॉ तक कि एक अवसर दिए बिना हटाने को कर्तव्य भी लगाया गया है उसे ऐसे निष्कासन के विरुद् कारण बताना होगा। इस धारा के तहत ऐसे निष्कासान का अदेश देने से पहले किसी पूछताछ पर विचार हनीं किया जाता है। इसके अलावा एक कुलपति जिसे 1966 के अधिनियम XI के पारित होने के बाद नियुक्त किया गया है, को पद से नहीं हटाया जा सकता हे धारा 12 की उप धारा 130 ए के तहत को मनमाने और अवैध रुप से हटाया गया पुनः धारा 13 एक के संशोधित अधिनियम के लागू होने के बाद नियुक्ति कुलपति पर लागू होता है इसलिए अपीलकर्त्ता के अनुसार धारा 13 ए में निहित प्रावधान स्पष्ट रुप से केवल उसके खिलाफ निर्देशित है, क्योंकि संशोधन अधिनियम से पहले का एक स्पष्ट मामला है।

इसके अलावा अपीलकर्त्ता के अनुसार कुलपति के रुप में नियुक्त व्यक्ति एक समूह का गठन करते है और उन्हें समान स्थिति वाले व्यक्तियों के रुप में माना जाना चाहिए ओर उसके साथ एक जैसा व्यवहार किया जाना चाहिए जबकि 13 एक के आधार पर अपीलकर्त्ता संशोधन अधिनियम के प्रारंभ होने की तिथि को कुलपति था और अन्य व्यक्तियों जिन्हें इसके बाद कुलपति के रुप में नियुक्त किया जाना है के बीच एक अंतर किया गया है अपीलकर्त्ता के अनुसार यह भेदभाव फिर से बिना किसी आधार के है न ही ऐसे किसी वर्गीकरण का कानुन के मुख्य उद्देश्य से कोई उचित संबंध है।

अपीलकर्त्ता ने धारा ए पर भी भरोसा किया जिसे 1996 के अधिनियम के धारा 6 द्वारा पेश किया गया, जो सीनेअ सिंडिकेअ अकादमिक परिषद और वित्त समिति के

पुननगठन से संबंधित थे और दलील दी गई कि जबकि उन शैक्षणिक निकायों या प्राधिकरणों को बिना किसी समस्या सीमा के जारी रखने और उनके पुनर्गठन होने तक कार्य किरने की अनुमति दी गइ्र थी के संबंध में अकेले कुलपति के लिए संशोधन अधिनियम के तहत 90 दिनों की अवधि तय की गई थी, जिसके भीतर कुलाधिपति दूसरे कुलपति को नियुक्त करने के लिए बाध्य था। यह फिर से अपीलकर्त्ता के खिलाफ भेदभाव का स्पष्ट प्रमाण है।

उत्तरदाताआें ने अपीलकर्त्ता की आरे से उठाए गए रुख का खंडन किया। प्रशनगत उपाय को अधिनियममित करने के लिए विधानमंडल की योजना का समर्थन करने के अलावा वे आग्रह करते है कि संविधान का अनुचछेद 14 बिल्कुल भी लागू नहीं होता। उत्तरदातओं के अनुसार कुलपति के पद का कार्यकाल घटाकर तीन वर्ष कर दिया गया था, इसलिए विधायिका ने कुलपति के कार्यकाल की समाप्ति का प्रावधान करना उचित समझा जो 1996 के अधिनिमय XI के प्रारंभ में और नए कुलपति की नियुक्ति के लिए भी उस पद पर थे ये वह परिस्थितियॉ थी जिनमें धारा 13 ए को 1959 के अधिनियम में 1996 के अधिनियम में धारा 5 को शामिल किया गया था। उन्होने इसी तरह के प्रावधानों का भी उल्लेख किया, जिन्हे राज्य के दो अन्य विश्वविद्ालयों से संबंधित दो अधिनियमों में शामिल किया गया था, अर्थात आध्र विश्वविद्ालय और श्री वेकटेश विश्विद्ालय।

उत्तरदाताआें ने आगे दलील दी कि 1966 के अधिनियम 2 ने कुलपति को जो पहले से ही नियुक्त किया गया था और जो उस अधिनियम से पहले कार्य कर रहा था, पहली श्रेणी में उन कुलपतियों से अलग रखा जिन्हें बाद में नियुकत किया जाना था और जिन्हें उक्त संशोधन अधिनियम के पारित होने के बाद में नियुक्ति की अवधि दोनों के मामले में दूसरी श्रेणी में काम करना था। कुलपति अर्थात अपीलकर्ता उत्तरदाताआें के अनुसार जो 1996 के अधिनियम XI के पारित होने की तिथी को पद पर था, इसलिए वह अकेल ही एक वर्ग में आ गया और इस तरह तीसरी श्रेणी में आ गया ओर विधायिका ने उनसे संबंधित विशेष विशेषताओं को ध्यान में रखना उचित समझा और इसलिए उनके कार्यालय की समाप्ति के संबंध में अलग प्रावधान किए। इसलिए उनके कार्यालय की समाप्ति के संबंध में अलग प्रावधान किए। इसलिए अधिनियम बनाकर एक उचित प्रावधान किया गया 13 ए मौजूदा कुलपति के संबंध में, जिसे स्वयं एक वर्ग के रुप में माना जाता था।

उत्तरदाताआें ने यह भी दावा किया कि विधायिका को कुलपति जो उस समय कार्यालय में थे, वो अपने आप में एक वर्ग के रुप में मानने और उनके कार्यालय की समाप्ति के संबंध में उपर्युक्त प्रावधान करने का अधिकार था, और इसलिए उस उद्देश्य के लिए एक कानून बनाया गया था ओर उस आधार पर सावैधानिक रुप से बैध था। अपीलकर्त्ता के प्रति शत्रुता का आरोप या भेदभाव को प्रभावित करने के किसी भी प्रयास का उत्तरदाताओं ने वर्ग के रुप में अपीलकर्त्ता वर्गीकरण उचित था और इस तरह के वर्गीकरण का संशोधित कानून के उद्देश्य के उचित संबंध था।

उत्तरदाताआें ने आगे दलील दी कि एक सक्षम विधानमंडल द्वारा अधिनियमित एक कानून द्वारा मौजूदा कुलपति के पद की अवधि में कटौती पर्याप्त और सिद् कारण के लिए कुलपति को हटाने के बराबर नहीं है उत्तरदाताआें ने यह भी आग्रह किया कि सीनेअ सिडिकेट और अकारमिक परिषद जैसे अकादमि निकाय था प्राधिकरण नियुक्ति या गठन के मामले में या कानून के तहत कार्य करने में, कुलपति के समान स्थिति में नहीं है और इसलिए अपिलकर्त्ता उनके अनुसार धारा 33 एक द्वारा पेश किए गए 1966 के अधिनियम XI के धारा 7 पर निर्भरता रखने का हकदार नहीं था। इन सभी कारणों से उन्होने आग्रह किया गया धारा 7 पर निर्भरता रखने का हकदार नहीं था। इन सभी कारणों से उन्होने आग्रह किया कि विधानमंडन द्वारा संविधान के अनुच्छेद 14 का उल्लंधन नहीं किया गया धारा 13 ए को बनाकर।

इससे पहले कि हम उच्च् न्यायालय के विद्वान न्यायधीशों द्वारा दर्ज किए गए निष्कर्षो का संदभ ले, संबंधित कानूनों के भौतिक प्रावधानों को संदर्भित करने के लिए यह एक सुविधाजनक चरण होगा। हमने पहले ही उल्लेख किया है कि अपीलकर्त्ता 1957, यानी उस्मानिया विश्वविद्यालय अधिनियम 1959 पारित होने पहले भी, उस्मानिया विश्वविद्यालय के कुलपति के रुप में कार्य कर रहा था। हमने यह भी संकेत दिया है कि विश्वविद्ालय का प्रशासन 1947 में प्रख्यापित चार्टर द्वारा शासित होता था। उस्मानिया विश्वविद्यालय अधिनियम 1959 (1959 का अधिनियम) (इसके बाद अधिनियम कहा जाएगा), 1959 में पारित किया गया और राजपत्र में 2 फरवरी 1959 को प्रकाशित किया गया। अधिनियम की धारा 3 में प्रावधान है कि एच० ई० एच० द्वारा प्रस्थापित संशोधित चार्टर द्वारा स्थापित विश्वविद्यालय 8 दिसंबर, 1947 को हैदराबाद के निजाम और अधिनियम के प्रारंभ होने से ठीक पहले हैदराबाद में कार्यरत के पुनगठित किया गया और उस्मानिया विश्वविद्यालय के नाम से धोषित किया गया। उक्त धारा में यह भी प्रावधान है

कि विश्वविधालय एक आवासीय शिक्षण और संबंद् विश्वविद्यालय होगा, जिसमें एक कुलाधिपति एक कुलपति एक प्रति कुलपति एक सीनेट एक सिंडिकेट और एक अकादमिक परिषद शामिल है।

धारा 12 (1) में कुलाधिपति द्वारा धारओं के तहत गठित समिति द्वारा चयनित कम से कम तीन व्यतियों के पैनल से कुलाधिपति द्वारा कुलपति की नियुक्ति का प्रावधान है धारा 2 तत्संबंधी। लेकिन यदि कुलाधिपति ने चयनित व्यक्तियों में से किसी को भी मंजूरी नहीं दी, तो वह समिति से एक नया पेनल मॉग सकते थे। उप धारा 2 में समिति के गठन का प्रावधान है।

धारा 13 में कुलपति के कार्यकाल वेतन भत्ते आदि का प्रावधान है। उप धारा (1) के अन्तर्गत कुलपति को 5 वर्ष की अवधि के लिए पद धारण करना था और वह पुनः नियुक्ति के लिए पात्र था। इस आशय का एक प्रावधान था कि कुलपति अपनी नियुक्ति की अवधि समाप्त हाने के बाद छह महीने से अधिक की अवधि के लिए या जबतक उसका उत्तराधिकारी नियुक्त नहीं हो जाता और अपने कार्यालय में प्रवेश नहीं कर लेता जो भी पहले हो, पद पर बना रहेगा। उप धारा (6) में कुपति का पद स्थायी रुप से रिक्त होने पर उसे भरने का प्रावधान है और धारा 12 की उप धाराओं (1) और (2) के अनुसार एक कुलपति को नियुक्त किया जाता हे, वह पूरे 5 वर्ष के कार्यकाल के लिए पद पर रहना था।

धारा 5 (6) ने उस्मानिया विश्वविद्यालय संशोधित चार्टर, 1947 को निरस्त कर दिया। लेकिन उप-धारा (2) वशर्ते कि इस तरह के निरसन के बावजूद अधिनियम के प्रारंभ से निरसन के बावजूद, अधिनियम के प्रारंभ से ठीक से पहले कुलपति के रुप में पद धारण करने वाला व्यक्ति, ऐसे प्रारभ पर विश्वविद्ालय का कुलपति होगा और वह तब तक पद पर बने रहने का हकदार था जबतक एक कुलपति की नियुक्ति अधिनियम के अनुसार की जाती हैँ।

अधिनियम के भौतिक प्रावधानों के उपरोक्त संदर्भ से यह ध्यान में आएगा कि कुलपति को हटाने का कोई प्रावधान नहीं था और यह कि कुलपति की नियुक्ति कुलाधिपति द्वारा की जाती थी, जैसा कि धारा 12 में प्रावधान है। कुलपति के पद का कार्यकाल 5 वर्ष और वह पुनः नियुक्ति के पात्र थे। अपीलकर्त्ता जो पहले से ही एक कुलपति था 1947 के चार्टर के तहत कार्य कर रहा था और अधिनियम की धारा 51 के आधार पर कुलपति के रुप

में जारी रहेगा। जैसा कि पहले ही उल्लेख किया गया हे, उन्हें मूल रु से 1959 में अधिनियम के तहत 5 साल की अवधि के लिए कुलपति के रुप में नियुक्त किया गया था।

अधिनियम को उस्मानिया विश्वविद्यालय (संशोधन) अधिनियम 1966 (1966 का अधिनियम 2) (इसके बाद पहला संशोधन अधिनियम कहा जाएगा) द्वारा कुछ विशिष्टतओं में संशोसित किया गया था पहले संशोधन अधिनियम की धारा 6 पेश की गई 7 ए जिसे हमने निर्धारित किया हैँ।

7 ए सरकार द्वरा निर्देश-विभाग विश्वविद्ालय के साथ परामर्श के बाद विश्वविद्ालय को प्रमुख शैक्षिक नीति के मामलों जैसे विश्वविद्ालय शिक्षा का पैटर्न शिक्ष के माध्यम और स्नातकोत्तर केन्द्रों की स्थपना से संबंधित निर्देश दे सकता है इसका पालन किया जाना चाहिए।

(2) इस अधिनियम के तहत अपनी शक्तियों के प्रयोग और आपने कार्यो के प्रदर्शन में विश्वविद्ालय उप धारा (1) के तहत जारी निर्देशों का पाहलन करेगा

इसी तरह धारा 9 में अधिनियम की धारा 12 में नई उप धाराएँ (1) और (2) को शामिल किया गया है, जो इस प्रकार हैः

12 (1) कुलपति की नियुक्ति कुलाधिपति द्वारा की जाएगी

(2) कुलपति को उसके पद से कदाचार या अक्षमता के आधार पारित कुलाधिपति के आदेश के अलावा और ऐसे व्यक्ति द्वारा उचित जॉच के बाद नहीं हटाया जाएगा जो उच्च न्यायालय यका न्यायाधीश है या रहा हे कुलाधिपति द्वारा न्यायालय जिसमें कुलपति को ऐसे निष्कासान के विरुद् अपना अभ्यावेदन देने का अवसर होगा।

धारा 10, अधिनियम की धारा 13 में कुछ अन्य संशोधनों को प्रभावी करते हुए एक नई उप-धारा (1) उप धारा (2) के प्रावधानों के अधीन धारा 12 कुलपति अपनी नियुक्ति की तारीख से तीन साल की अवधि के लिए पद धारण करेगा और केवल तीन साल की एक और अवधि के लिए उस पद पर पुनः नियुक्ति के लिए पात्र होगा,

वशर्ते कि कुलपति अपनी नियुक्ति की अवधि समाप्त होने के बाद छह महीने से अधिक की अवधि के लिए या जब तक उसका उत्तराधिकारी नियुक्त नहीं हो जाता और अपने कार्यालय में प्रवेश नहीं कर लेता, जो भी पहले हो, पद पर बना रहेगा।

यह संशोधन अधिनियम था जब यह बिल चरण में था, तो विभिन्न अधिकारियों द्वारा इस पर कडी अालोचना की गई थी कि सरकार द्वारा विश्वविद्ालय की स्वायत्ता में हस्तक्षेप करने की मॉग की गई थी। उस संबंध में ऐसा प्रतीत होता है कि अपीलकर्त्ता के अधिनियम में शामिल किए जाने वाले प्रावधानों की आलोचना करते हुए कई व्यान दिए है, यह भी अभिलेख पर है कि प्रस्तावित संशोधनों के सबंध में इन आलोचनाओं के जबाब में सरकार की ओर से जबावी व्यान दिए गए थे। उन्हें निपटा दिया गया है, उच्च न्यायालय द्वारा विस्तृत रुप से लेकिन वे इस प्रयोजन के लिए उन मामलों में जाने का प्रस्ताव नहीं रखते हैँ।

उपरोक्त किए गए और संदर्भित संशोधनों के आधार पर, यह देखा जाएगा कि कुलपति के कार्यालय का कार्यकाल 5 वर्ष से घटाकर 3 वर्ष कर दिया गया है। कुलपति की नियुक्ति के तरीके में भी बदलाव किया गया ओर कुलपति को उनके पद से हटाने का प्रावधान शामिल है, लेकिन ऐसा केवल धार में निहित प्रावधानों के अनुसार ही किया जा सकता है, अधिनियम की धरा 12 (2) घारा 7 ए सरकार को प्रमतुख शैक्षिक नीति के मामलों से संबंधित विश्विद्ालय को निर्देश देने की शक्ति देती है और सरकार द्वारा जारी ऐसे निर्देशों का पालन करना विश्वविद्ालय के लिए अनिवार्य कर दिया गया है

जैसा कि हम पहले ही बता चुके है अपीलकर्त्ता को 30 अप्रैल 1964 को 5 साल की अवधि के लिए फिर से कुलपति नियुक्त किया गया था और जब पहला संशोधन अधिनियम पारित हआ तब वह पद पर बने हुए थे। इन कार्यवाही में अपीलकर्त्ता द्वारा लिए गए दावों में से एक यह यहे कि वह प्रदन्त सुरक्षा का हकदार है। उपर उल्लिखित अधिनियम की धारा 12 (2) ऐसा कोई विवाद नहीं दिखता कि प्रथम संशोधन अधिनिकयम के पारित होने के बाद कुलपति की कोइ्र नियुक्ति की गई हो।

इस अधिनियम के उस्मानिया विश्वविद्ालय (दूसरा संशोधन) अधिनियम 1966 (1966 का

अधिनियम XI) द्वारा आगे संशोधित किया गया जिसे दूसरे संशोधन अधिनियम के रुप में जाना जाता है इसे 16 मई 1966 को राज्यपाल की सहमति प्राप्त हुई। दूसरे संशोधन अधिनियम की धारा 2 को हटा दिया गया। अधिनियम की धारा 7 ए दूसरे संशोधन अधिनियम की धारा 5 जिसने नई धाराएॅ प्रस्तुत की अधिनियम में 13 ए और कौन सा प्रावधान इन कार्यवाही में हमले का विषय है इस प्रकार हैः

"13 ए एक नए कुलपति की नियुक्ति के संबंध में विशेष प्रावधान इस अधिनियम में कुछ भी होने के बावजूद पद धरण करने वाले व्यक्ति उस्मानिया विश्वविद्यालय (दूसरा संशोधन) अधिनियम 1966 क प्रारंभ होने से ठीक पहले का कुलपति तब तक उस पद पर बना रहेगा, जब तक कि धारा 12 की उप धारा (1) के तहत कुलाधिपति द्वारा एक नए कुलपति की नियुथ्कत नहीं कर दी जाती अपने कार्यालय में प्रवेश करता हे और ऐसी नियुक्ति ऐसे प्रारंभ के नब्बे दिनों के भीतर की जाएगी। ऐसे नए कुलपति की नियुक्ति पर और उसके कार्यालय में प्रवेश करने पर, ऐसी नियुकित से ठीक पहले कुलपति का पद धारण करने वाला व्यक्ति इस पद पर बने रहना बंद कर देगा।"

दूसरे संशोधन अधिनियम की धारा 6 ए को शामिल किया गया जो इस प्रकार है

"33 ए सीनेट सिडिकेट अकाद मिल परिषद और वित्त समिति के पुनर्गठन के संबंध में विशेष प्रावधान। इस अधिनियम में किसी भी बात के बावजूद सीनेट सिडीकेट अकादमिक के सदस्य परिषद एवं वित्त समिति गठित एवं कार्यशील उसयानिया विश्वविद्यालय (संशोधन) अधिनियम, 1966 के प्रारंभ होने से पहले ऐसे सदस्य बने रहेगे और केवल तब तक कार्य करेगे जब तक कि एक नर्इ सीनेट सिडिकेट अलादमिक परिषद या वित्त समिति, जैसा भी मामला हो, इसका अधिनियम के तहत पुनर्गठित नहीं हो जाती, ऐसी नई सीनेट, सिडिकेट अलादमिक परिषद या वित्त समिति के सदस्य, जैसा भी मामला हो तुरंत पद धारण करेगे। ऐसे पुनर्गठन से पहले, वह उस पद पर रहना बंद कर देगा।"

यहॉ तक कि उत्तरदाताओं के अनुसार धारा 13 ए को कुलपति के रुप में अपीलकर्त्ता की सेवाएँ समाप्त करने के उद्देश्य से शामिल किया गया था ताकि कुलाधिपति को कुलपति की नई नियुक्ति करने में सक्षम बनाया जा सके। हमने अधिनियम की धारा 33 ए का उललेख किया है। क्योंकि अपीलकर्त्ता का मामला भी इस आशय का था कि सीनेट सिडिकेट अलादमिक परिषद आदि के संबंध में अधिनियम की धारा 13 ए के समान कोर्इ प्रावधान नहीं है, हलॉकि वे भी इसके जैसे ही स्थित है।

1- आध्र पदेश विधानमंडल दूसरे संशोधन अधिनियम की धारा 5 को अधिनिमित करने के लिए सक्षम था। उक्त धारा संविधान के अधिनियम 19 (1) (एफ) उल्लंधन नहीं करती हैँ।

2. अपीलकर्त्ता उस समय कुलपति का पद संभाल रहा था। जब अधिनियम लागू हआ और उसकी धारा 51 (2) के तहत वह तब तक कुलपति के रुप में बना रहा जब तक कि कुलाधिपिति ने 1959 में एक आदेश पारित नहीं कर दिया कि एक बार फिर अधिनियम के तहत नियुक्त किया जाए।

3. धारा 13 (1) जैसा कि पहले संशोधन अधिनियम द्वारा पेश किया गया थि, पूर्वव्यापी नहीं है ओर अपीलकर्त्ता का 5 साहल की अवधि के लिए कुलपति के रुप में बने रहने का अधिकार अप्रभावित रहेगा और नई धारा 13 (1) उस पर लागू नहीं होता।

4. नई धारा 12 (2) जैसा कि प्रथम अधिनिमय द्वारा प्रस्तुत किया गया है अपीकर्त्ता पर लागू नहीं होता है।

5. अधिनियम की धारा 12 (2) और 13 ए उसी क्षेत्र को कबर नहीं करते है धारा 12 (2) दंड के माध्यम से हठाने का प्रावधान करती है और इसका संचालन धारा के उसी क्षेत्र पर होता है धारा 13 ए जहाू पद की समाप्ति कार्यकाल में कटौती के कारण होती है। धारा 12 (2) केवल भावी कुलपतियों और धारा 13 ए पूरी उतरह से मौजूदा कुलपति अपीलकर्त्ता पर लागू होता है।"

धारा 13 ए पर बार के संबंध में, अधिनियम 14 के आधार पर संविधान में कहा गया है कि यह एक अनुचित भेदभाव हे विद्ान न्यायाधीशों का विचार था कि उक्त धारा ऐसी किसी भी दुर्वलता से ग्रस्त नहीं विद्ान न्यायाधीशों ने माना कि विवादित कानून के परिणामस्वरुप कुलपतियों को दे। श्रेणियों में वर्गीकृत किया गया है (ए) अपीलकर्त्ता मौजूदा कुलपति के रुप में, पहली श्रेणी के अन्तर्गत आता है, और (बी) अधिनियम के तहत नियुकत किया जाने वाला भावी कुलपति जो दूसरी श्रेणी में आता हे। उच्च न्यायालय के अनुसार इस तरह के वर्गीकरण द्वारा प्राप्त किया जाने वाला उद्ेश्य, जैसा कि दूसरे संशोधन अधिनियम 1966 के उद्ेश्यों और कारणों में देखा जा सकता है धारा के तहत निर्धारित 3 वर्ष की कम अवधि को प्रभावी करना था, प्रथम संशोधन के बाद अधिनियम की धारा 13 (1) उच्च न्यायालय ने आगे कहा कि धारा 13 ए अपनाया गया वर्गीकरण अपीलकर्त्ता को मौजूदा कुलपति के रुप में स्वय एक वर्ग में रखने का एक समझदार अंतर पर आधारित है, जो अपीलकर्त्ता को भविष्य के कुपतियों के अलग करता है और यह कि इस अंतर का दस उद्ेश्य से तर्क संगत संबंध है जिसे प्राप्त किया जाता है दूसरे संशोधन

अधिनियम द्वारा इस संबंध में विद्‌ान न्यायाधीश आध्र विश्विधालय अधिनियम 1925 और श्री बेंकटेश्वर विश्वविद्‌ालय अधिनियम 1954 में लगीाग उसी समय अधियनियमित समान प्रावधानों की भी बकालत करते।

उच्च न्यायालय का यह भी विचार है कि विधायिका ने इस तथ्य को ध्यान में रखा होगा कि अपीलकर्त्ता ने पहले ही कुलपति के रुप में 6 साल से अधिक की सेवा कर ली है, ताकि उसे अपने आप भविष्य से अलग वर्ग के रुप में माना जा सके, जिन कुलपतियों की नियुक्ति की जानी है और उन्होने कोई सेवा ही नहीं दी है। इसमें कोई संदेह नहीं है कि विद्‌ान न्यायाधीशों ने इस तथ्य पर ध्यान दिया हे कि अपीलकर्त्ता को मान्यता ओर प्रशंसा से भरी कुशल सेवा का एक घटनापूर्ण रिकार्ड मिला है, लेकिन अपीलकर्त्ता उन परिस्थितियों की पैरवी नहीं हो, जिसके तहत उसे अपना पद खोना पडेगा।

अततः इन निष्कर्षो पर उच्च न्यायालय इस निष्कर्ष पहुचा कि दूसरे संशोध्न अधिनियम की धारा 5 अधिनियम में धारा 13 ए किसी दुर्बलता से दूषित नहीं है जैसा कि अपीलकर्त्ता ने आरोप लगाया है, और अंत याचिकाकर्त्ता की रिट याचिका को खारिज कर दिया गया।

अपीलकर्त्ता ने निसंदेह, उच्च न्यायालय के समक्ष उठाए समक्ष उठाए गए अधिकाशं मुद्दों को फिर से उठाया हे। लेकिन अपीलकर्त्ता के विद्‌ान वकील द्वारा हमारे समक्ष जो आक्षेप लगाया गया हे वह संविधान अनुच्छेद 14 पर आधारित है उच्च न्यायालय द्वारा दर्ज किए गए निष्कर्षो और व्यक्त किए गए विचारों को उत्तरदाताओं की ओर से उपस्थित विद्‌ान अतिरिक्त सॉलिसिटर जनरल द्वारा कायम रखने की मॉग की गई। लेकिन हमें नहीं लगता कि उच्च न्यायालय के समक्ष अपील द्वारा उठाए गए बडे विवाद में जाना आवश्यक है इस विचार में कि हमें पूर्व में लिए गए हमले के सम्बन्ध में सफल होना चाहिए विवादिन प्रावधान संविधान के अनुच्छेद 14 पर आधारित था। अपीलकर्त्ता द्वारा अधिनियम के बारे में की गई आलोचना प्रश्न के लिए जिम्मेदार थी या नहीं, यह एक साधारण प्रश्न नहीं मानता है कि कया अधिनियम में प्रावधान किसी भी तरह से उललंधनकारी है यदि उत्तर है तो यह कहने की आवश्यकता नहीं है कि प्रावधान को समाप्त करना होगा इसलिए हम अपना ध्यान केवल अधिनियम के प्रावधों तक ही सिमित रख रहे है और हम किसी भी अन्य परिस्थिति का उल्लेख करेगे जो अधिनियम के आधार पर हमले के आधार पर विचार करने सीमित उद्‌देश्य के लिए संविधान के अनुच्छेद 14 के तहत हमारे सामने लाया जाएगा।

श्री खेतलवाड के अनुसार अधिनियम की धारा 12 (2) के प्रावधानों का लाभ उठाने का हकदार है। संशोधन अधिनियम के पारित होने की तारीख को अपीलकर्त्ता माना जाता था, एक कुलपति था और वह इसी तरह जारी था। वह अपने कार्यालय से 12 (2) के प्रावधानों के अनुसार नहीं हटाया जा सकता है। लेकिन अधिनियम की धारा 13 ए के मद्देनजर दूसरे संशोधन अधिनियम द्वारा पेश अपीलकर्त्ता को अपने कार्यालय से 30 दिनों के भीतर बाहर कर दिया जाता है। कुलपतियों की दो श्रेणियों का निर्माण, अर्थात अधिनियम के तहत नियुक्त कुलपतियो की और कुलपति जो दूसरे संशेधन अधिनियम के प्रारंभ ने पद पर थे किसी भी तर्क संगत आधार पर नहीं है। कुलपति के रुप में नियुक्त व्यक्ति एक समूह का गठन करते है, और आक्षेपित प्रावधान इस व्यक्ति के बीच अंतर करता हे जो उस समय कुलपति हे और अन्य व्यकित जिन्हे उसके बाद कुलपति नियुक्त किया जाना है, इस भेदभाव के लिए विल्कुल कोई आधार नहीं है। इसके अलावा भले ही यह कहा जा सकता है कि उच्च व्रगीकरण के लिए कोई आधार और कानून के उद्देश्य के बीच साठगॉठ था संबंध होना चाहिए जिसका इस मामले में फिर से अभाव है।

श्री सेवलवाड ने आगे आग्रह किया कि अधिनियम के तहत नियुक्त कुलपति की सेवाएँ केवल अधिनियम की धारा 12 (2) में निहित प्रावधानों के अनुरुप ही समाप्त की जा सकती है अधिनियम की धारा 13 ए से निर्धारित प्रक्रिया अपनाए बिना। अधिनियम की धारा 12 (2) श्री सेतलवाड ने कहा कि अधिनियम में कोइ्र प्रावधान नहीं थ 13 (2) भविष्य में नियुक्त होने वाले कुपतियों पर लागू होता हे यद्पि संशोधन के बाद भी अधिनिमय के तहत एक कुलपति के लिए पद का कार्यकाल तीन निर्धारित किया गया हे, और यह सभी कुलपतियों के लिए लागू हो सकता है जहॉ तक अपीलकर्त्ता का संबंध है उसका कार्यकाल कम कर दिया गया हे या अधिनियम की धारा 13 ए के तहत 30 दिनांक तक सीमित हैँ।

श्री सेतलवाड ने फिर से आग्रह किया है कि यह मानते हुए भी कि उचित मामले में प्रावधानों को लागू करना विधानमंडल के लिए खुला हे किवल एक व्यकित या व्यक्तियों के एक समूह को फिर भी इस न्यायालय द्वारा अच्छी तरह से स्थापित किया गया है कि कानून द्वारा जो वर्गीकरण है वह एक अंतर पर आधारित एक वर्गीकरण होना चाहिए और इस अंतर में एक तर्क संगत संबंध वस्तु होनी चाहिए जिसे कानून प्राप्त किया जाना चाहिए। इन दोनों परीक्षणों को लागू करते हुए विद्ान वकील का आग्रह हे कि विवादित कानून को संविधान के अनुच्छेद 14 का उल्लंधन माना जाता है।

विदान अतिरिक्त महा न्याययिकर्त्ता ने आग्रह किया हे कि प्रथम संशोधन अधिनियम द्वरा कुलपति के पद की अवधि को कम कर दिया गया है। विधानमंडल ने इस प्रावधान को प्रभावी बनाने के लिए और अधिनियम के तहत नई नियुक्तियों को सक्षम करने के लिए अधिनियम 13 ए बनाया हे। यह धारा स्पष्ट रुप से अपीलकर्त्ता जैसा व्यक्तियों पर लागू होती है जो उस समय पद पर है जब ये प्रावधान लागू हुए थे। प्रावधान वस्तुओं की प्रकृति में उन कुलपतियों पर लागू यनहीं हो सकता है जिन्हें भविष्य में अधिनियम के तहत नियुक्त किया जाना है। अतः यह कहना गलत है कि सभी कुलपति चाहे वे किसी भी पदति या ढंग से उसके अलावा अपीलकर्त्ता लगभग 7 वर्षो तक कुलपति रहा विधियिका विद्‌ान इन परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए कुलपति ने दूसरे संशोधन अधिनियम की तिथि को पद संभालने वाले कुपतिको स्वयं एक वर्ग के रुप में मानने का फैसला किया है और उन्हें उन व्यकितयों से अलग कर दिया हे जो पहली बार कुलपति नियुक्त किए गए। ऐसा वर्गीकरण उचित है ओर इसका दूसरे संशोधन अधिनियम द्‌वारा प्राप्त किए जाने वाले उद्‌ेश्य से तर्क संगत संबंध है अर्थात सभी कुलपतियों के लिए तीन साल के कार्यकाल में एकरुपता लाना। विद्‌ान महान्यायभिकर्त्ता आगे बताते है कि अपीलकर्त्ता अधिनियम की धारा 12 (2) के लाभ का हकदार नहीं है। विधानमंडल प्रश्नगत उपाय को अधिनियमित करने के लिए समक्ष था और विधानमंडल का उद्‌ेश्य को यथाशीध्र प्रभावी बनाना था। उन्हाने बताया कि इसी तरह के प्रावधान लगभग इसी समय दो अधिनियमों में भी किए गए थे, अर्थात आंध्र विश्वविद्‌ालय अधिनियम 1925 और श्री वेकटेश्वर विश्वविद्‌ालय अधिनिमय 1954 यह हो सकता है कि विधानमंडल वर्तमान कुलपति को बदलने का कोई अन्य तरीका अपना सकता था लेकिन यह नीति का मामला है जिसकी समीक्षा न्यायालयों में नहीं की जा सकती है जब तक कि विधायिका के पास उपाय लागू करने की क्षमता है और इस प्रकार अधिनियमित प्रावधन किसी अन्य कानूनी दूर्बलता से प्रभावित नहीं होते है।

हमने अपीलकर्त्ता के विद्‌ान वकील श्री सेतलवाड और उत्तदातओं की ओर विद्‌ान महान्याभिकर्त्ता के तर्को से सहमत होने के अच्छुक नहीं है। जब कोई प्रश्न उठता है तो संविधान के अनुच्छेद 14 के सिदांतों को ध्यान में रखना चाहिए इस न्यायलय द्‌वारा कइ्र अवसरों पर कई निर्णयों में निर्धारित किए गए है। बुधन चौघरी बनाम बिहार राज्य में दास न्यायमूर्ति ने न्यायालय के लिए बोलते हुएः

यह अच्छी तरह से स्थापित हो गया है कि हलॉकि अनुच्छेद 14 वर्ग विधान को प्रतिबंधित करता है, लेकिन यह कानून के प्रयोजनों के लिए उचित वर्गीकरण को प्रतिबंधित

नहीं करता है हलॉकि अनुमेय परीक्षा पास करने केलिए दो शर्तो को पूरा करना चाहिए जो एक साा समूहित व्यक्तियों या चीजो को समूह से बाहर छोडे गए अन्य लागों से अलग करता है और (1) उस अंतर का उस बस्तु से वर्कसंगत संबंध होना चाहिए जिसे विचाराधीन कानून से प्राप्त किया जाना चाहिए।

इसलिए यह देखा जाएगा कि किसी वर्गीकरण को अनुमेय के रुप में स्वीकार करने के लिए और अनुच्छेद 14 द्वारा प्रभावित नहीं होने के लिए प्रश्नगत माप उपरोक्त निर्णय में निर्धारित दे परीक्षणों को उर्त्तीण करने में सक्षम होगा। उपर दी गई टिप्पणियॉ राम कृष्ण डालमिय बनाम श्री न्यायमूर्ति एस० आर० तेडोलकर मामले में धारा सी० जे० द्वार उद्धृत की गई है। यह निस्संदेह सच है जैसा कि विद्वान अतिरिक्त महान्यायिकर्त्ता के विरुद् या कोई व्यक्गित व्यक्तियों या चीजो के विरुद् निर्देशित कर सकता है। लेकिन इससे पहले कि इस तरह के प्रावधानों को बैठा माना जा सकके न्यायालय को संतुष्ट होना चाहिए कि वर्गीकरण का एक उचित आधार है जो कानून के पक्ष पर ही दिखाई देता है या आसपास की परिस्थितियो या सामान्य ज्ञान के मामलों से अनुमान लगाया जा सकता है। यदि वर्गीकरण का ऐसा कोई उचित आधार कानून के सामन प्रकट नहीं होता है, या आस-पास की परिस्थितियों से अनुमान लगाया जा सकता है, तो कानून को नग्न भेदभाव के उदाहरण के रुप में रद्द करना होगा।

यह भी ध्यान में रखा जाना चाहिए कि किसी अधिनियम की संवैधानिकता के पक्ष में हमेशा एक धारणा होती है और उस पर असंवैधानिक रुप में हमला करने वाले पक्ष पर यह दिखाने का बोझ होता है कि संवैधानिक सिद्धांतों का स्पष्ट उल्लंघन हुआ है। लेकिन जैसा कि रामकृष्ण डालमिया के मामले मे दास द्वारा सी.जे. पृष्ठ 297 पर देखा गया,

> “जबकि विधायिका की ओर से मौजूदा स्थितियों के बारे में अच्छा विश्वास और ज्ञान माना जाना चाहिए, अगर कानून या आस पास की परिस्थितियों के बारे में अदालत के ध्यान में कुछ भी नही लाया गया है, जिस पर वर्गीकरण पर उचित रुप से आधार के रुप में किया जा सकता है, संवैधानिकता की धारणा को आगे नही बढाया जा सकता हमेशा यह मानने की हद तक कि कुछ व्यक्तियों या नियमों को

शत्रुतापूर्ण या भेदभावपूर्ण कानून के अधीन करने के लिए अगोचर और अज्ञात कारण होने चाहिए।"

ऊपर उल्लिखित सिद्धांतों को ध्यान में रखते हुए, अब हम इस पर विचार करने के लिए आगे बढते है कि क्या अपीलकर्ता यह स्थापित करने में सक्षम है कि दूसरे संशोधन अधिनियम की धारा 5 अधिनियम में धारा 13 को शामिल करना, भेदभावपूर्ण है और इस प्रकार संविधान के अनुच्छेद 14 का उल्लंघन है।

हम पहले भी कह चुके है कि अपीलकर्ता को अधिनियम के तहत 30 अप्रैल, 1964 को 5 साल की अतिरिक्त अवधि के लिए कुलपति के रुप में नियुक्त किया गया था और जब दो संशोधन अधिनियम पारित हुए, तब वह पद पर बने हुए थे आमतौर पर वह पूरे कार्यकाल के लिए उस पद पर बने रहने का हकदार होगा, जो केवल अप्रैल 1969 के अंत में समाप्त होगा। पहला संशोधन अधिनियम धारा 12 में प्रदान किया गया है कि कुलपति की नियुक्ति कुलाधिपति द्वारा की जानी है, लेकिन धारा 12 (2) में विशेष रुप से प्रावधान किया गया है कि कुलाधिपति को उसके कार्यालय में दुर्व्यवहार या अक्षमता के आधार पर पारित कुलाधिपति के आदेश और ऐसे व्यक्ति द्वारा उचित जांच के बाद, जो न्यायाधीश है या रहा है, उच्च न्यायालय या उच्चतम न्यायालय का, जिसे कुलाधिपति द्वारा नियुक्त किया जा सकता है, के अलावा नही हटाया जा सकता है। यह भी प्रावधान किया गया था कि कुलपति को इस तरह के निष्कासन के खिलाफ अपना प्रतिनिधित्व करने का अवसर दिया जाएगा। प्रथम दृष्टया धारा 12 की उप धारा (2), अपीलकर्ता पर भी लागू होना चाहिए जो अधिनियम के पारित होने के बाद भी पद पर बना रहा। इसमें कोई संदेह नही कि कुलपति के पद का कार्यकाल अधिनियम की धारा 13(1) के तहत 3 वर्ष निर्धारित किया गया था। लेकिन प्रथम संशोधन अधिनियम में उस समय उस पद पर आसीन कुलपति के कार्यकाल की समाप्ति के संबंध में कोई प्रावधान नही किया गया था।

इसमें कोई विवाद नही हो सकता कि धारा 18ए दूसरे संशोधन के अधिनियम 5 द्वारा पेश किया गया, केवल अपीलकर्ता से संबंधित है। वास्तव में, उच्च न्यायालय के समक्ष दायर जवाबी हलफनामें में उत्तरदाताओं की ओर से लिया गया रुख इस आशय का था कि विधानमंडल ने द्वितिय संशोधन अधिनियम के प्रारंभ के समय पद पर बने रहने वाले कुलपति को स्वयं एक वर्ग के रुप में मानने के लिए चुना था और कुलाधिपति को नई नियुक्तियाँ करने में सक्षम बनाने की दृष्टि से अधिनियम की धारा 13ए अधिनियमित किया गया।

अतः यह स्पष्ट है कि धारा 13ए केवल अपीलकर्ता पर लागू होता है। हालाँकि, इसमें कोई संदेह नही की उत्तरदाताओं की ओर से यह कहा गया है कि समान प्रावधान, लगभग उसी समय दो अन्य विश्वविद्यालयों अर्थात आंध्र विश्वविद्यालय और श्री वेंकटेश्वर विश्वविद्यालय से संबंधित दो अन्य अधिनियमों में शामिल किए गए थे और यद्यपि इस परिस्थिति को उच्च न्यायालय के विद्वान न्यायाधीशों द्वारा भी ध्यान में रखा गया है, हमारी राय में, वे प्रावधान अपीलकर्ता द्वारा अधिनियम की धारा 13ए पर वार करने से कोई लेना देना नही है।

यह एक स्पष्ट मामला है जहाँ कानून स्वयं अपने प्रावधानों को अधिनियमित करके निर्देशित करता है धारा 13ए को एक व्यक्ति अर्थात अपीलकर्ता के विरुद्ध और इसे वैध माना जा सके, इस न्यायालय को संतुष्ट होना चाहिए कि अपीलकर्ता को स्वयं एक वर्ग के रुप में समूहित करने के लिए उचित आधार है और ऐसा उचित आधार या तो कानून में दिखाई देना चाहिए या अन्य आस पास में घटाए परिस्थितियों से जाना चाहिए। अपीलकर्ता के विद्वान वकील के अनुसार, उस्मानिया विश्वविद्यालय के सभी कुलपति एक समूह के अंतर्गत आते है और उन्हे केवल एक इकाई के रुप में वर्गीकृत किया जा सकता है और अपीलकर्ता को एक वर्ग के अंतर्गत समूहित करने और कुलपतियों को भविष्य में नियुक्त

करने का कोई औचित्य नही है। किसी भी स्थिति में, यह भी आग्रह किया जाता है कि उक्त वर्गीकरण का अधिनियम के उद्देश्य से कोई संबंध नही है।

हमारा ध्यान दूसरे संशोधन विधेयक के उद्देश्यों और कारणों के विवरण की ओर आकर्षित किया गया है, जिसका सामग्री भाग इस प्रकार हैः

> "उस्मानिया विश्वविद्यालय अधिनियम 1966 की धारा 10 द्वारा संशोधित उस्मानिया विश्वविद्यालय अधिनियम की धारा 13(1) के तहत कुलपति के पद का कार्यकाल घटाकर तीन वर्ष कर दिया गया है।
>
> धारा 13ए जिसे विधेयक के खंड 5 द्वारा सम्मिलित करने का प्रस्ताव है, आदेश देता है कि अधिनियम में कुछ भी होने के बावजूद उस्मानिया विश्वविद्यालय (दूसरा संशोधन) अधिनियम 1966 के प्रारंभ होने से ठीक पहले कुलपति का पद धारण करने वाला व्यक्ति, तब तक उस पद पर बने रहेंगे जब तक कि संशोधित धारा 12(1) के तहत कुलाधिपति द्वारा एक नए कुलपति नही कर दी जाती है और वह अपने कार्यालय में प्रवेश नही कर लेता है और ऐसी नियुक्ति ऐसी शुरुआत के बाद नब्बे दिनों के भीतर की जाएगी।"

हम भी सेतलवाड़ के इस तर्क को स्वीकार करने के लिए इच्छुक है कि विवादित कानून का कोई औचित्य नही है जिसके परिणामस्वरुप कुलपतियों को दो श्रेणियों में वर्गीकृत किया गया है और भविष्य के कुलपतियों को अधिनियम के तहत नियुक्त किया जाएगा।

हमारे विचार में, कुलपति, जिसे अधिनियम के तहत नियुक्त किया गया है या कुलपति जो दूसरे संशोधन अधिनियम के प्रारंभ होने की तिथि को उस पद पर था एक एकल समूह या वर्ग बनाता है। यह मानते हुए भी कि दो अलग अलग समूहों के अंतर्गत आने वाले इन दो प्रकार के व्यक्तियों का वर्गीकरण किया जा सकता है, फिर भी यह

आवश्यक है कि ऐसा वर्गीकरण एक समझदार अंतर पर आधारित होना चाहिए जो अपीलकर्ता को अलग करता है अधिनियम के तहत नियुक्ति कुलपति से हमे ऐसा कोई बोधगम्य अंतर नही मिल रहा है जिसके आधार पर वर्गीकरण को उचित ठहराया जा सके।

यह भी आवश्यक है कि कानून द्वारा किए गए वर्गीकरण या अंतर का कानून द्वारा प्राप्त की जाने वाली वस्तु के साथ तर्कसंगत संबंध होना चाहिए। हमने दूसरे संशोधन विधेयक के उद्देश्यों और कारणों के विवरण को पढा है जो बाद में कानून बन गया साथ ही पूरे अधिनियम को भी, जैसा कि यह अब मौजूद है, पढ लिया है। दूसरे संशोधन के लिए उद्देश्यों और कारणों के विवरण में विधेयक ऊपर निकाला गया, यह देखा गया है कि एक तथ्य को छोड़कर कि कुलपति के कार्यालय का कार्यकाल धारा 13(1) और धारा 13ए के तहत 3 साल तक कम कर दिया गया है और अधिनियमित करने का इरादा था, कोई अन्य नीति इंगित नही की गई है जो भेदभाव को उचित ठहराएगी। कुलपति के लिए तीन साल की अवधि तय करने वाला कार्यकाल, पहले संशोधन अधिनियम द्वारा पहले ही प्रभावी हो चुका है और इसलिए अपीलकर्ता की सेवाओं को समाप्त करने के लिए विभेदक सिद्धांत को अधिनियमित करके अपनाया गया है। अधिनियम की धारा 13ए को उचित नही माना जा सकता। दूसरे शब्दों में, धारा 13ए में अपनाया गया अंतर और अपीलकर्ता और अकेले अपीलकर्ता के खिलाफ निर्देशित को दूसरे संशोधन अधिनियम द्वारा प्राप्त की जाने वाली वस्तु के साथ तर्कसंगत नही माना जा सकता है।

जबकि अधिनियम की धारा 12 के अंतर्गत नियुक्त किए गए कुलपति को धारा 12(2) के अंतर्गत प्रक्रिया अपनाकर ही पद से हटाया जा सकता है, अपीलकर्ता की सेवाएँ जो एक कुलपति भी थे और समान पद पर थे, को अधिनियम की धारा 13ए लागू करके, समाप्त करने की मांग की गई है। हमे अधिनियम में अंतर्निहित ऐसी कोई नीति नही दिखती जो अपीलकर्ता को दिए गए इस विभेदक व्यवहार को उचित ठहराती हो। प्रथम

संशोधन अधिनियम के तहत कुलपतियों के पद का कार्यकाल निस्संदेह कम कर दिया गया है और सभी कुलपतियों के लिए 3 वर्ष निर्धारित किया गया है। लेकिन, जहाँ तक अपीलकर्ता का सवाल है अधिनियम की धारा 13ए के अनुसार, वह उस पद पर तभी तक बना रह सकता है जब तक कि कुलाधिपति द्वारा नए कुलपति की नियुक्ति नही कर दी जाती और वह नियुक्ति 90 दिनों के भीतर की जानी है। जबकि अधिनियम के तहत नियुक्त अन्य सभी कुलपति तीन साल की अवधि तक पद पर बने रह सकते है, दूसरे संशोधन अधिनियम के प्रारंभ होने की तारीख से 90 दिनों की समाप्ति पर अपीलकर्ता को सचमूच अपने कार्यालय से बाहर कर दिया जाता है। कानून में इस अधिनियम के तहत नियुक्त कुलपतियों की सेवाओं को अधिनियम की धारा 13ए के तहत प्रदान किए गए तरीके से समाप्त करने का कोई प्रावधान नही है। धारा 13ए के तहत प्रदान किए गए तरीके से समाप्त करने का कोई प्रावधान नही है। धारा 13ए द्वारा अपीलकर्ता को उन लाभों से भी वंचित कर दिया गया है जो अधिनियम की धारा 13 की उप धारा (1) के प्रावधानों के तहत उपलब्ध हो सकते है, जिसका लाभ अन्य सभी कुलपतियों को मिलता है।

1959 में अपीलकर्ता की नियुक्ति और फिर 1964 में अधिनियम की धारा 12(1) के तहत जैसा कि कुलाधिपति द्वारा दो संशोधनों से पहले था, निस्संदेह एक पैनल धारा 12(2) के तहत गठित समिति द्वारा प्रस्तुत नाम प्रथम संशोधन अधिनियम के पारित होने के बाद कुलपति की नियुक्ति विशेष रुप से धारा 12(1) के तहत कुलाधिपति द्वारा की जाती है, जैसा कि अभी धारा मौजूद है। यह एक ऐसी परिस्थिति है, जिस पर प्रतिवादी द्वारा भरोसा किया गया है, ताकि संशोधित अधिनियम के तहत नियुक्त किए जाने वाले कुलपति से मौजूदा कुलपति के रुप में अपीलकर्ता को अलग किया जा सके। एक और परिस्थिति जिस पर भरोसा किया गया वह यह है कि अपीलकर्ता 7 वर्षों तक कुलपति रहा है। हमारी रय में, ये ऐसे महत्वपूर्ण या निर्णायक कारक नही है जो अपीलकर्ता को स्वयं एक वर्ग के रुप में मानने को उचित ठहराएंगे, क्योकि कुलपति की शक्तियों और कर्तव्य या तो अधिनियम के

तहत, संशोधन के पहले, या अधिनियम के तहत, संशोधन के बाद भी यथावत जारी रहेगा। निष्कर्ष निकालने के लिए अपीलकर्ता का वर्गीकरण स्वयं एक वर्ग के रुप में किसी भी समझदार अंतर पर आधारित नही है जो उसे अन्य कुलपतियों से अलग करता है और इसका कानून के लक्ष्य से कोई तर्कसंगत संबंध नही है, इत्यादि धारा 13ए अनुच्छेद 14 से प्रभावित है।

अपीलकर्ता ने धारा 13ए पर आरोप किया है, सीनेट सिंडिकेट, अकादमिक परिषद और वित्त समिति के संबंध में, धारा 33ए के तहत किए गए एक अलग प्रावधान पर निर्भर करते हुए भेदभावपूर्ण है। हालाँकि, हमने इस सवाल पर विचार नही किया है कि क्या अपीलकर्ता को उसी वर्ग के अंतर्गत माना जा सकता है, जैसा कि धारा 33ए में उल्लिखित अन्य प्राधिकारियों के अंतर्गत आता है जैसा कि हमने अनुच्छेद 10 एवं अन्य के आधार पर अपीलकर्ता के तर्क को स्वीकार कर लिया है।

उपरोक्त कारणों से, हम विद्वान अधिवक्ता के दलीलों को स्वीकार करते है और मानते है कि दूसरे संशोधन अधिनियम (1996 का अधिनियम XI) की धारा 5 को शामिल करते हुए अधिनियम में धारा 13ए, भेदभावपूर्ण और संविधान के अनुच्छेद 14 का उल्लंघन है, अतः इसे असंवैधानिक मानकर रद्द किया जाना चाहिए। परिणाम यह है कि अपील की अनुमति दी जाती है और अपीलकर्ता यहाँ और उच्च न्यायालय में उत्तरदाताओं द्वारा देय अपील में अपनी लागत का हकदार होगा।

आर.के.पी.एस अपील की अनुमति।

राकेश सिन्हा